# लोकपाल अधिनियम में कसावट की आवश्यकता

लोकपाल और लोकायुक्त अधिनियम, 2013 जनवरी 2014 से अस्तित्व में आया था। यह पूरे भारत के सरकारी सेवकों पर लागू होता है। इस अधिनियम के दायरे में प्रधानमंत्री और सभी केन्द्रीय मंत्री भी आते हैं। इसके अंतर्गत सेवानिवृत्त अधिकारियों पर भी कार्यवाही की जा सकती है। इस कानून को अस्तित्व में लाने के लिए अन्ना हजारे जैसे सामाजिक कार्यकर्ता ने अनेक धरने दिए, प्रदर्शन किए। अनेक तरह की बहस-चर्चाएं की गईं। तब जाकर भ्रष्टाचार के विरूद्ध इस प्रकार के कानून को अमलीजामा पहनाया गया।

अधिनियम को अस्तित्व में लाने की चर्चा 1966 से चल रही थी। सबसे पहले प्रशासनिक सुधार समिति ने लोकपाल की नियुक्ति की अनुशंसा की थी। अन्ना हजारे के नेतृत्व में चले जन आंदोलन ने राजनीतिक दलों पर इतना दबाव डाला कि सत्तासीन यूपीए और एन डी ए दोनों ने ही इसके चलते होने वाले चुनावी लाभों को देखते हुए जल्दबाजी में ही अधिनियम को सर्वसम्मति से पारित कर दिया। इस कारण से अधिनियम में अनेक कानूनी विसंगतियां रह गईं।

- अधिनियम के भाग 63 में हर एक राज्य में लोकायुक्त की नियुक्ति को अनिवार्य बताया गया था। लेकिन अधिनियम की अधिसूचना के एक वर्ष बाद तक भी सभी राज्यों में ऐसा संभव नहीं हो सका।

बहुत से राज्यों ने तो अधिनियम से पूर्व ही लोकायुक्त की नियुक्ति कर ली थी। जिन राज्यों को करना बाकी था, वे अभी भी अधर में हैं। तमिलनाडु जैसे राज्य ने कानून को अधिसूचित तो कर दिया है, परन्तु लोकायुक्त की नियुक्ति बाकी है।

- अधिनियम के खंड 24 में भ्रष्टाचार का अरोप पाए जाने पर रिपोर्ट की एक कॉपी किसी 'सक्षम अधिकारी' (कॉम्पीटेंट अथॉरिटी) को भेजने का प्रावधान है, जो एक सुरक्षा वॉल्व की तरह है। उदाहरण के लिए प्रधानमंत्री के भ्रष्टाचार में लिप्त पाए जाने पर लोकसभा को सक्षम अधिकारी के तौर पर बताया गया है।

- अधिनियम की विसंगतियों को दूर करने के लिए जो समय-सीमा दी गई थी, वह समाप्त हो चुकी है। इसके विस्तार के लिए नए कानून की आवश्यकता होगी।
- अधिनियम का प्रभाव केन्द्र सरकार के अधीन आने वाले सरकारी कर्मचारियों तक ही समिति है। राज्य सरकार के कर्मचारियों पर यह लागू नहीं होता है।

भ्रष्टाचार की जड़ें राज्य सरकार की विभिन्न एजेंसियों, स्थानीय निकायों तक फैली हुई हैं। इन सबको राज्य लोकायुक्त के दायरे में रखा गया है। कर्नाटक राज्य में लोकायुक्त नियुक्त किए गए हैं, जिनकी शक्तियां सर्वोच्च न्यायाधीश के समतुल्य रखी गई हैं। इसके बावजूद वे राज्य में भ्रष्टाचार के मामलों को रोकने में असफल रहे हैं। ऐसे भी उदाहरण हैं, जब स्वयं इस भ्रष्टाचार रोधी संस्था पर आरोप लगे हैं। एक मामले में तो लोकायुक्त को अपने पुत्र के लिप्त होने पर त्यागपत्र भी देना पड़ा था।

- संस्था की सार्थकता केवल केन्द्र में होने पर नहीं है। पहले तो अधिनियम को ही जल्दबाजी में पारित किया गया। पांच वर्षों के बाद, यह उतनी ही अस्त-व्यस्त स्थिति में चलाया जा रहा है। वह भी तब, जब उच्चतम न्यायालय ने बार-बार चेतावनी दी है।

लोकसभा के चुनावों के चलते आचार संहिता लागू की जा चुकी है। नई नियुक्तियों और प्रोन्नति पर रोक लगा दी गई है। चुनाव आयोग की पूर्व अनुमति के साथ ही अपवादस्वरूप नियुक्तियां की जा सकती हैं। यह दलील दी जा सकती है कि लोकपाल और लोकायुक्त की नियुक्ति सरकार द्वारा नहीं बल्कि राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। साथ ही चुनाव आयोग की 'क्या करे और क्या नहीं' की सूची में संदेहास्पद मामलों को ही चुनाव आयोग के पास भेजने का नियम है। अतः इसका लाभ उठाते हुए लोकपाल और लोकायुक्त की नियुक्ति को यह कहकर संभव किया जा सकता है कि ऐसा उच्चतम न्यायालय के आदेश पर किया जा रहा है। विरोधी दल भी चुनाव प्रचार में भ्रष्टाचार का विरोध कर रहे हैं। इस कारण ऐसी नियुक्तियों का कोई भी विरोध असंभव है। देश के लिए यह उपयुक्त समय है, जब भ्रष्टाचार की बीमारी को उखाड़ने की दिशा में एक कदम उठाया जा सकता है।

**'द इंडियन एक्सप्रेस' में प्रकाशित आर सी अय्यर के लेख पर आधारित। 25 मार्च, 2019**